कहानी का आसपास

प्रफुल्ल कोलख्यान

कुँवर नारायण की कविता और महत्त्व से हिंदी के पाठक अवगत हैं। 1956 में अपने पहले काव्य-संग्रह चक्रव्यूह के साथ हिंदी कविता में अपनी जोरदार उपस्थिति दर्ज करानेवाले कुँवर नारायण पिछले पाँच दशक से हिंदी कविता को समृद्ध करते रहे हैं। परिवेशः हम तुम, अपने सामने, कोई दूसरा नहीं तथा इन दिनों में संकलित उनकी कविताओं से गुजरना बहुरंगी यथार्थ के कौतूहलों और अर्थ की नई-नई संभावनाओं की बारिकियों के कोमल संस्पर्श को अनुभव करना है। उनके चिंतन-प्रधान लेख की विचार-मुद्रा साहित्य की अनिवार्य दिशाओं को ओझल होने के खतरों से आगाह करती रही है। कुँवर नारायण के साक्षात्कारों में प्रश्नों के प्रति उनके सरोकार और सलूक से समय और साहित्य से जुड़े मसलों को समझने में मदद मिलती है। यह सच है कि साहित्य की सभी विधाएँ आपस में जुड़ी हुई होती हैं, उनके सृजन एवं आस्वादन में काफी हद तक समानता भी होती है, इसके बावजूद न सिर्फ बाह्य संरचना में बल्कि अंतर्वस्तु के सत्व में भी एक ऐसा बारीक अंतर जरूर होता है जिसके कारण विभिन्न विधाओं में लिखनेवाले साहित्यकारों की पहचान मुख्य रूप से किसी एक विधा से बनती-जुड़ती है। कुँवर नारायण की प्रमुख पहचान कवि की ही है। कुँवर नारायण की कविताओं के गंभीर पाठकों के लिए उनकी कहानियों में भी गहरी दिलचस्पी होनी चाहिए। उनकी कहानियों से उनकी कविताओं को समझने की भी दृष्टि मिल सकती है।

‘आकरों के आसपास’ में कुल सतरह कहानियाँ संकलित हैं। इस संग्रह के प्रथम संस्करण की भूमिका में ‘पाठकों से’ संवाद करते हुए कुँवर नारायण कहते हैं, ‘स्वभावतः अपनी बात अनुत्तेजित ढंग से कहता हूँ और इसीलिए अनुत्तेजित वातावरण में कहना पसंद करता हूँ।... न इनमें कड़वे यथार्थ की झाँकी है, न मीठे प्रेम की कल्पना, न पहेली बुझानेवाले चारित्रिक दावँपेंच, न मनोवैज्ञानिक तिकड़मों में उलझाया हुआ सेक्स और क्राइम... सच पूछिए तो इन सबको ठंडे दिल-दिमाग से सोचते हुए बातचीत का एक अंदाज है--- यथार्थ से एक रोमांस। कुछ इस रह मानो रोमांस यथार्थ से पलायन न होकर

उसी की एक खास पहचान या अतिरिक्त माप हो। (यहाँ मैं रोमांस शब्द ठीक उन्हीं अर्थों में इस्तेमाल कर रहा हूँ जिन अर्थों में सरवांते का 'डान क्विगज़ोट' एक रोमांस है।) कहानी कहते समय मैं पाठक को यह याद दिलाने की कोशिश नहीं करता कि कहानी नहीं कह रहा हूँ, बल्कि जगह-जगह पाठक को अपनी तरफ करके कहता चलता हूँ कि यह यथार्थ नहीं सिर्फ़ कहानी है--- कुछ इस तरह कि पाठक को मेरे कहने पर शक होने लगे और वह अपने-आप से सवाल करे कि क्या सचमुच यह कहानी ही है या उससे भिन्न कुछ भी? यथार्थ के नाम पर कहानी नहीं, कहानी के नाम पर यथार्थ की बात करता हूँ--- उस यथार्थ की बात जिसे केवल व्यावहारिक स्तर पर नहीं, मुख्यतः मानसिक स्तर पर जिया जाता है।... ज्यादातर कहानीकरों का ध्यान विषय पर ही केंद्रित रहा और यथार्थ के नाम पर सेक्स, हिंसा, पारिवारिक और सामाजिक मुश्किलों आदि को ही कहानी का विषय बनाया गया, लेकिन कहानी के आंतरिक स्ट्रक्चर को लेकर बहुत सतर्क प्रयोग कम ही देखने में आए। इन कहानियों में कथा-तत्त्व को गौण रखा गया है उसकी क वजह यह भी रही कि मैं कहानी की शुद्ध प्रयोगात्मक संभावनाओं की छानबीन करना चाहता था।' यहाँ भीष्म साहनी के कथा-शिल्प की बरबस याद आती है। यथार्थ के प्रति बरताव साहित्य के मूल्यांकन का महत्त्वपूर्ण प्रसंग तैयार करता है। पाठक के समक्ष यथार्थ को सीधे-सीधे प्रस्तुत करना उतना कठिन नहीं होता है जितना कि वास्तविकता को गल्प में कुछ इस तरह से बदलना कि पाठक उस गल्प को खुद यथार्थ में बदलने के लिए सक्रिय हो जाए। इस तरह से पाठक यथार्थ को अर्जित करने के लिए खुद सक्रिय और सक्षम हो जाता है, साहित्य का प्रमुख उद्देश्य भी यही है। कुँवर नारायण की कहानियाँ यथार्थ और रोमांस के अंतर्संयोजन से अपनी कहानियों को भिन्न दिशा से उसी ओर ले जाती है, पाठक के मन में इस प्रश्न के लिए जगह बनाती है कि उसके अनुभव से गुजरी कहानी, कहानी के अतिरिक्त और क्या है, बल्कि और क्या-क्या है। अर्थ बहुलता के लिए यह जगह बनाना और अर्थ बहुलता के विनियोग से यथार्थ की बहुआयामिता को साहित्य के उद्देश्य की मूल दृष्टि से जोड़ना महत्त्वपूर्ण है। कहना न होगा कि यथार्थ का इकहरापन यथार्थ की वैयक्तिक संप्रेषणीयता और सामाजिक स्वीकार्यता की स्वाभाविकता को क्षतिग्रस्त करता है।

उत्तेजना

हमारे समय का एक प्रमुख मुहावरा है। यह उत्तेजना किसी महत्त्वपूर्ण प्रस्थान की पीठिका नहीं बनती, बल्कि उन्माद की खुराक बन जाती है। उन्माद न सिर्फ विचार का बल्कि संवेदना का भी सबसे बड़ा अवरोधक है। इस नजरिये से देखने पर प्रेमचंद साहित्य में उत्तेजना की न्यूनता और महत्ता के अंतर्संबंध को भी सूत्रबद्ध किया जा सकता है। धूमिल की बहुत प्रसिद्ध कविता 'मोची राम' और कुँवर नारायण की

कहानी है 'मुगल सल्तनत और भिश्ती'। इनके एक मिलते-जुलते प्रसंग को आमने-सामने रखकर देखा जा सकता है। धूमिल के शब्द हैं, 'राँपी से उठी हुई आँखों ने मुझे/ क्षण-भर टटोला/ और फिर जैसे पतियाते हुए स्वर में/ वह हँसते हुए बोला---/ बाबूजी! सच कहूँ---- मेरी निगाह में/ न कोई छोटा है/ न कोई बड़ा है/ मेरे लिए, हर आदमी एक जोड़ी जूता है/ जो मेरे सामने/ मरम्मत के लिए खड़ा है' और कुँवर नारायण का भिश्ती कहता है, 'मैं बादशाह ही नहीं, भिश्ती भी हूँ। चमड़े की औकात जानता हूँ। मेरे लिए हर चमड़ा बराबर है--- चाहे वह मेरी मश्क का हो, चाहे गुलाम के जूते का हो, चाहे किसी के सिर का हो। मैं चमड़े-चमड़े में फर्क करना इंसानियत के खिलाफ समझता हूँ! --- और यही मैं बादशाह बनकर साबित करना चाहता हूँ।'

उत्तेजना के बाहर ठीक से देखा जाए तो भले आदमी की आत्मशक्ति में आई छीजन हमारे समय की बड़ी त्रासदी है। लघु स्तर पर अपने जीवन के दैनंदिनी अनुभवों से हम जान सकते हैं कि किस तरह भला आदमी त्याग के बाद अपने को ठगा हुआ-सा महसूस करता है। बड़े स्तर पर, आजादी के आंदोलन के दौरान भले लोगों ने जिन लक्ष्यों के लिए शहादत दी थी उन लक्ष्यों के ठगे जाने से भारतीय आदमी का भला मन कितना टूटा, इसे सिर्फ महसूस किया जा सकता है। पहली ही कहानी 'आकारों के आसपास' का निषकर्ष भले आदमी के मन का पता देती है, 'भले आदमी की आत्मशक्ति को जो चीज सबसे आसानी से तोड़ देती है वह है उसकी सद्भावना पर आघात। वह कष्टों, अभावों और अकेलेपन में जी सकता है लेकिन इस विपर्यय में नहीं जी सकता कि दुनिया उसे धोखेबाज समझे--- चाहे वह दुनिया की जितनी भी कम परवाह करे। वह ईमानदारी से जो है उसके लिए बड़ी-से-बड़ी सजा भुगत जाने में गौरव अनुभव करेगा, लेकिन एक झूठ के लिए शहीद होना! इससे बड़ी ट्रेजडी उसके लिए और क्या हो सकती है?'

'आकारों के आसपास' एक ऐसी कहानी है जो आधुनिक समय में रिश्तों की बदलती हई बुनियाद को परखती है। आभासी दुनिया की बढ़ती हुई अपरिहार्यता को रेखांकित करनेवाली यह कहानी समय के बदलते हुए संदर्भों से हमारा परिचय कराती है। आत्मीयता और शारीरिकता दोनों से भिन्न और विच्छिन्नता में सौंदर्य का संधान मनुष्य के बदलते हुए मन का पता देती है--- 'वह अक्सर दिखाई दे जाती है, और उसे इस तरह देखना मुझे अच्छा लगता है क्योंकि इस तरह एक संबंध बनता है जिसके टूटने में व्यथा नहीं। आत्मीयता और शारीरिकता दोनों से भिन्न बह एक पहचान है सुंदरता की.... और मैं एक विशेष दृष्टि जो उस सौंदर्य को अद्वितीय बनाता है। जब तक उसे पहाचनता हूँ, कलाकार की तीव्र अनुभूतियों में जीता हूँ.... मंत्रमुग्ध।'

इसी तरह 'चाकू की धार' एक ऐसी कहानी है दो जीतने की जिद्द और प्यार के सरोकरों के आंतरिक अवरोधों की पहचान करती है--- 'प्यार या नफरत सिर्फ बच्चे करते हैं; बड़े होकर आदमी सिर्फ व्यापार करते हैं! इस धोखे में मत रहना कि तुम प्यार या ईमानदारी जैसी चीजों से दूसरों को जीत सकते हो--- और जीतना जरूरी है, चाहे जैसे; क्योंकि हर आदमी 'चाहे जैसे' जीतने की कोशिश में है, सिर्फ प्यार और ईमानदारी से नहीं !!'

'संदिग्ध चालें' शरीर और मुक्त आत्मा के उदार सौंदर्य के एकांत उत्सव की अल्पना रचती है--- 'उसके खुले केश, अधमुँदी आखें। पूर्णतः मेरी वह: फिर भी, न जाने क्यों मन उसके सामने निःसंकोच नहीं हो पाता, केवल कृतज्ञ होकर रह जाता है। उसका यह रूप आइने का मुहताज नहीं, न समय का, क्योंकि वह दोनों से मुक्त आत्मा का उदार सौंदर्य है जो अँधेरे की घनी विकृत तहों को फाड़ सहसा तारों की तरह जगमगा उठा था। उस क्षण वह असीम प्यार दे सकनेवाली कोई दुर्लभ शक्ति थी। उसके शरीर पर दाग हैं: मैं उन्हें गुलाबों पर गिरी ओस से धो डालना चाहता हूँ। दाग नहीं छूटते। वह मेरे परेशान माथे को चूम लेती है--- ये दाग इस शरीर का अंग बन चुके हैं: बिना शरीर को बदले इन दागों से छुटकारा नहीं। तुम उनकी ओर मत देखो, केवल मेरी आँखों में देखो जहाँ केवल तुम हो, केवल उत्सव है: जहाँ दूसरे नहीं हैं।'

एक कहानी है 'दूसरा चेहरा' यह कहानी किसी व्यक्ति के बारे में बनी-बनाई धारणाओं और उसके तात्कालिक आचरण में निहित अगणित संभावनाओं के फर्क को रेखांकित करती है। 'कमीज' कहानी कानूनी पेंच में निर्दोष के फँस जाने पर होनेवाली दुर्गत का बयान करती है। कहानी के स्वरूप और स्ट्रक्चर को लेकर बहुआयामी बहस है। 'आकरों के आसपास' में संकलित कुँवर नारायण की कहानियाँ, कहानी और कहानी के अपने प्रयोग में यथार्थ के अंतरंग तक संवेदना की पहुँच बनाने के कारण पहले से कहीं ज्यादा आज पठनीय है और यही इसका महत्त्व है।

इस सामग्री के उपयोग के लिए लेखक की सहमति अपेक्षित है।
सादर, प्रफुल्ल कोलख्यान